

गुजरात से प्राप्त कुछ महत्त्वपूर्ण जैन प्रतिमायें

प्रमोद कुमार त्रिवेदी

१९७७ में लगभग एक दर्जन धातु निर्मित कलाकृतियाँ भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण, पश्चिमी मण्डल, बड़ोदरा के अधीक्षक, पुरातत्त्वज्ञ डॉ० चे० मार्गबन्धु द्वारा अधिकृत की गयी थीं। उन्होंने लेखक को उक्त कृतियाँ परीक्षण एवं अध्ययन हेतु प्रदान कीं तथा प्रस्तुत लेख तैयार करने का परामर्श दिया। यद्यपि इन कृतियों का मूल स्थान निश्चित रूप से ज्ञात नहीं है, किन्तु शैलीगत विशिष्टताओं के आधार पर विवेचनाधीन प्रतिमायें गुजरात में निर्मित प्रतीत होती हैं। उपरोक्त समूह में उत्कीर्ण एवं अलिखित श्वेताम्बर एवं दिगम्बर सम्प्रदाय की प्रतिमायें, चौमुखी, दीप-लक्ष्मी, गजारोही, गरुड़ एवं राष्ट्रकूट शैली की छापयुक्त किन्तु पर्याप्त अर्वाचीन कमल-धारिणी का एक नमूना भी सम्मिलित है। तिथि की दृष्टि से इनका काल बारहवीं से उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य का है। प्रस्तुत लेख में मात्र उत्कीर्ण एवं चुनी हुई कृतियों का ही विवेचन किया जा रहा है।

१. महावीर का चतुर्विंशतिपट्ट (कांस्य, १७.०५ से० मी० × १०.०५ से० मी०)

भगवान् महावीर ध्यानमग्न, पद्मासन मुद्रा में एक उच्च त्रिरथ, सिंहासन पर रखी सादी पीठिका पर आसन्न हैं। मूल-नायक के सिर पर उष्णीश है, चेहरा अण्डाकार, नेत्र आयताकार एवं 'प्रलम्ब कर्ण पाश' हैं। वक्षः स्थल पर 'श्रीवत्स' लांछन रजत उरेकित है। सिर के पीछे भामण्डल तथा ऊपर कलशमय छत्र है। उनके पार्श्व में दोनों ओर एक तीर्थंकर कायोत्सर्ग मुद्रा में अंकित हैं, जिनके पैरों के मध्य वस्त्रों का अंकन विवेचनाधीन कृति के श्वेताम्बर सम्प्रदाय से सम्बन्धित होने की पुष्टि करता है। माणिक्य-माल की इकहरी सीमान्त रेखा के शीर्षस्थ भाग पर मयूर-युग्म से युक्त मंगल-कलश है, जिसके ठीक नीचे छत्राच्छादित एवं कायोत्सर्ग मुद्रा में पार्श्व तीर्थंकरों से युक्त एक अन्य तीर्थंकर ध्यान-मुद्रा में निरूपित हैं। मूल-नायक सहित सम्पूर्ण परिकर पर अंकित तीर्थंकरों की संख्या कुल चौबीस है। सिंहासन के सम्मुख संभवतया दो मृगों के मध्य एक धर्मचक्र एवं नवग्रहों का गढ़न प्रतीक रूप में किया गया है। (चित्र १—क)

प्रतिमा के पृष्ठ भाग पर अंकित लेख के अनुसार इसकी प्रतिष्ठापना सन् ११५० में हुई थी। देवनागरी लिपि में उत्कीर्ण लेख के अनुसार प्रतिमा का प्रतिष्ठापन कार्य शान्तिप्रभ-सूरि द्वारा संवत् १२०७ (ई० ११५०) में वैशाख सुदि पंचमी, शुक्रवार के दिन श्रेष्ठि वढपाल, श्रेष्ठि जमदेव एवं पुत्र सालदेव के भाई प्रणसिंह के कल्याणार्थ की गयी थी। (चित्र १—ख)

उत्कीर्ण लेख इस प्रकार है—

संवत् १२०७ वर्षे माघ सुदि ५ शुक्ले श्रे० वढपाल श्रे० (?) जमदेवाभ्या श्रेयार्थे पुत्र साल देवेन भातृ प्रनसिंह समेतेन चतुर्विंशतिपट्टकारितः प्रतिष्ठित बहदहृछीयैः श्रीशान्तिप्रभसूरिभिः।

२. पार्श्वनाथ की पंचतीर्थिका प्रतिमा (कांस्य, १०.०५ से० मी० × ९ से० मी०)

श्वेताम्बर पंथ की इस कलाकृति में तीर्थंकर पार्श्वनाथ ध्यान मुद्रा में पद्मासन लगाये एक सादी गद्दी पर आसीन हैं। उनके कान लम्बे तथा अधरों का गढ़ाव कुछ मोटाई लिये है। इस 'सफण मूर्ति' में मूलनायक का सिर सप्त सर्पफणों द्वारा आच्छादित है। उनके दोनों पार्श्वों में चार अन्य जिन अंकित हैं, जिनमें से दो कायोत्सर्ग मुद्रा में तथा उपरिभाग में शेष दो तीर्थंकर कमलासन में बैठे हैं। इन चार तीर्थंकरों की शिरोभूषा मूल-नायक के सदृश्य है। पीठ दो उर्ध्व भित्तिस्तम्भों पर आश्रित क्षैतिज दण्ड युग्मों द्वारा निर्मित है। पृष्ठांकित आलेख के अनुसार यह पंचतीर्थिका प्रतिमा ई० १४४६ (वि० सं० १५०३) में प्रतिष्ठापित की गयी थी, तथापि उत्कीर्ण पीठ के ऊपरी भाग भग्न होने के कारण लेख की पूर्णरूपेण जानकारी प्राप्त नहीं हो सकी है। (चित्र २—क, ख)

३- शान्तिनाथ की पंचतीर्थिका प्रतिमा (कांस्य, १७.०२ से० मी० × ११.०५ से० मी०)

धातु-प्रतिमा की पीठिका के सम्मुख भाग में ॐ नमः एवं पाद चिह्न अंकित हैं। शान्तिनाथ जी ध्यानमग्न पद्मासन मुद्रा में एक सिंहासन पर आसन्न हैं। सिर के पीछे प्रभावली तथा ऊपर कलशयुक्त छत्र है जिसके पार्श्व में अभिषेक गजों का निरूपण हुआ है। मूल-नायक का सिर उष्णीश युक्त है तथा उनके नेत्र समचतुर्भुजीय आकार में प्रदर्शित हैं। मूल-नायक के पार्श्व में चार अन्य तीर्थंकरों का अंकन है। अधोभाग में कायोत्सर्ग मुद्रा में खड़े जिनों के साथ एक चैवरधारी सेवक भी त्रिभंग-मुद्रा में खड़ा है। परिकर पर अंकित पद्मबन्ध का बाह्य भाग गजमुखों से आविर्भूत मौक्तिक शृङ्खला द्वारा सुसज्जित है। कलाकृति के शीर्षस्थ भाग पर मंगल कलश के साथ मयूर-युग्म प्रदर्शित है। सिंहासन पर वामाभिमुख सिंहयुग्म बारीकी से गढ़ा गया है। सिंहासन के बायीं ओर सोलहवें तीर्थंकर के यक्ष गरुड़ एवं दाहिनी ओर यक्षी निर्वाणी का मूर्तन किया गया है। उच्च अलंकृत पीठिका पर नमस्कार मुद्रा में एक उपासक तथा मध्य में धर्मचक्र के दोनों ओर एक मृग है। चक्र के दोनों ओर नौ बिन्दुआकार, मोटी एवं लघु आकृतियाँ (पाँच बांयी ओर तथा चार दाहिनी ओर) स्पष्टतया नवग्रहों की प्रतीक हैं। (चित्र ३—क)

इस कलाकृति की तिथि ई० १४६८ है। प्रतिमा के पृष्ठभाग पर देवनागरी लिपि में उत्कीर्ण लेख इस प्रकार है—

सं० (संवत्) १५२५ वै० (वैशाख) सु० श्रु० ३ गुरौ श्री मूलसंघे सरस्वतीगच्छे भ० (भट्टारक) श्री सकलकीर्तिपट्टे भ० (भट्टारक) श्री विमलेन्द्रकीर्तिभिः श्री शान्तिनाथ बिम्बं प्रतिष्ठित हूँबड़ ज्ञातीय म० (महमू/महत्तर) करमसी (ह) भा० (भार्या) करमादे (वी) सु० (सुता) जइनालदे(वी) सं० रांका। (चित्र ३—ख)

आलेख से विदित होता है कि उक्त जैन प्रतिमा की प्रतिष्ठापना यशस्वी व्यक्ति करमसी (करमसिंह), पत्नी करमदेवी एवं पुत्री जइनदेवी द्वारा ई० १४६८ (संवत् १५२५), वैशाख सुदि ३ गुरुवार के दिन की गयी थी। प्रतिष्ठापन समारोह, दिगम्बर सम्प्रदाय (हूँबड़ जाति दिगम्बर मतावलम्बियों में होती है) के मूल संघ के सरस्वतीगच्छीय भट्टारक सकलकीर्ति के उत्तराधिकारी विमलेन्द्रकीर्ति द्वारा किया गया था।

४. पद्मावती (कांस्य, १९ से० मी० × १९.०५ से०मी०)

तेइसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ की शासनदेवी पद्मावती कमल दल चक्र के दोहरे आवर्तों द्वारा निर्मित पीठ पर ललितासन मुद्रा में आसीन हैं। समकालीन अन्य प्रतिमाओं की भाँति इसके नेत्रों, नासिका तथा अधरों का गढ़न विशेष परिष्कृत नहीं है। वह पद्म-कुण्डल, वलय, स्तनों के मध्य लटकता हार एवं पैरों में सादे पादवलय धारण किये हैं। घुटनों तक लम्बा अधोवस्त्र उदर-बंध द्वारा कसा है। इस चतुर्भुजीय प्रतिमा का दाहिना निचला हाथ वरद मुद्रा में है तथा ऊपरी दाहिना हाथ पाश धारण किये है। निचले बायें हाथ में बीजपूरक तथा ऊपरी बायें हाथ में गदा के सदृश्य अनगढ़ सनाल कर्मल हैं। उनका सिर तीन सर्प-फणों द्वारा सुरक्षित है। मुख्य प्रतिमा के ऊपर भाग में पुष्पांकित गद्दी पर तेइसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ ध्यानमग्न कमलासन मुद्रा में आसीन हैं। उनका सिर सप्त फणों द्वारा आच्छादित है। प्रभावली के अतिरिक्त इस परिकर युक्त मूर्ति के दोनों ओर एक-एक गज मुख है, जिसके मुख से आविर्भूत माणिक्य शृङ्खला शीर्ष भाग पर मंगल कलश में समाप्त होती है। (चित्र ४—क) कृति के पृष्ठ भाग पर अंकित तिथियुक्त लेख से ज्ञात होता है कि प्रतिमा की स्थापना ई० १६३६ (संवत् १६९३) में माघ मास के कृष्ण पक्ष के प्रथम दिन सतिनाग की पतिपरायणा पत्नी (नाम अपठनीय) द्वारा की गयी थी। प्रतिष्ठापन समारोह कुन्दकुन्दाचार्य वंश परम्परा के भट्टारक धर्मकीर्ति द्वारा सम्पन्न किया गया, जो कि दिगम्बर जैन सम्प्रदाय के मूलसंघ के बलात्कार गण से सम्बद्ध सरस्वतीगच्छ के थे। देवनागरी में लेख निम्नांकित है—

संवत् १६९३ वर्षे माघ मासे कृष्ण पक्षे प्रतिपदायां श्री मूलसंघे सरस्वती गच्छे बलात्कार (गणे) कुन्दकुन्दाचार्यान्वये भट्टारक धर्मकीर्ति गुरुपट्टे भट्टारक प्रकीर्ति(तम) सतिनाग पुत्र यो श्री सुखानन्द भार्या नित्यंप्रणमति। चित्र ४—ख)

मुस्लिम आक्रमण के पूर्व ९वीं-१३वीं शताब्दी के मध्य इस भूभाग में धातुकर्म एवं धातु शिल्पकला का कार्य अपने चरमोत्कर्ष पर था। इस समय गुजरात के कला शिल्पियों की बेजोड़ उन्नति के कारण ही गुजरात में मध्यकाल में धातुकर्म के अद्वितीय नमूनों का आविर्भाव हुआ। मध्यकाल एवं परवर्ती मध्यकाल में धातुकला कौशल को तकनीक एवं कला के विकास की पृष्ठभूमि हेतु समकालीन धार्मिक चेतना ने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। जैन श्रमण विशेष रूप से भव्य कृतियों के निर्माण के प्रेरणा स्रोत थे। जैन समुदाय द्वारा सदैव ही प्राचीन कला-परम्परा को निरन्तर संरक्षण मिला है। इस समुदाय ने मन्दिर निर्माण, मूर्ति शिल्प के विकास एवं पाण्डुलिपियों के

१. स्वर्ण कमल, ऐन्शियेण्ट आर्ट ऐण्ड टेक्नालॉजी ऑफ गुजरात, म्यूजियम ऐण्ड पिक्चर गैलरी, बड़ौदा, गुजरात स्टेट, १९८०.

आभारोक्ति—प्रस्तुत लेख के छाया चित्र श्री हैनरी माइकेल द्वारा तैयार किये गये हैं। इनका प्रतिलिप्याधिकार भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण द्वारा सुरक्षित है।

चित्र सूची

- १ (क-ख) चतुर्विंशतिपट्ट
- २ (क-ख) पार्श्वनाथ की पंचतीर्थिका प्रतिमा
- ३ (क-ख) शान्तिनाथ की पंचतीर्थिका प्रतिमा
- ४ (क-ख) पद्मावती यक्षी

सुरक्षित रख रखाव हेतु अपार धन व्यय किया गया है। जैन धर्म का विकास स्वतन्त्र रूप में हुआ। इसने प्राचीन धरोहरों को आज भी सुरक्षित रखा है।

सोलंकी युग में निर्मित प्रथम कृति के अतिरिक्त समस्त नमूने व्यक्तिगत रूपांकन की सहजता एवं ह्रास के द्योतक हैं। इनका प्रतिरूपण मोहक नहीं है, किन्तु प्रत्येक नमूने १२ उत्कीर्ण तिथियुक्त लेख धातु प्रतिमा शिल्प में हुए कलात्मक ह्रास के विभिन्न चरणों के साक्षी हैं। परवर्ती मध्यकाल में गुजरात में धातु कलाकृतियों के सर्जन हेतु पीतल का उपयोग होने लगा तथा इसका प्रचलन अत्यधिक बढ़ गया था क्योंकि यह स्वर्ण की भाँति चमकीला होता था। इस युग में मुसलमान शासकों के काल में कला गतिविधियों ने एक नवीन मोड़ लिया। धातुकर्मियों ने अधिक विश्वसनीय तकनीक एवं स्वतंत्र दृष्टिकोण अपना लिया था, किन्तु क्रमशः कला चेतना में सादगी एवं ह्रास में वृद्धि होती रही। मुगल शैली से प्रभावित होकर यह क्रमशः एक नवीन अनुकरणजन्य शैली में परिवर्तित होकर प्रतिमाएँ अत्यधिक भद्दी एवं कृत्रिम हो गयीं एवं अन्ततोगत्वा धातु शिल्प अवनति के पथ पर अग्रसर हो गया।

भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण, उत्खनन शाखा-२
नई दिल्ली-११०००३

अभिलेख

१. महावीर का चतुर्विंशतिपट्ट

“संवत् १२९० वर्षे माघशुदि ५ शुक्रे

श्रे० बृहपाल श्रे० श्रे० जम(?)जमदेवाभ्यां श्रेयार्थे पुत्र साचदेवेन भातृ(तु)
पूनसिंह समेतन चतुर्विंशतिपट्टः कारितः। प्रतिष्ठितं बृहद्गच्छीयैः श्रीशालि-
प्रभसूरिभिः।

पार्श्वनाथ २. संवत् १५०३ वर्षे माघ.....प्रणमति (या प्राणमति प्रयोग दिगम्बर
प्रतिमा परम्परा में प्रचलित है)

पंचतीर्थी ३. सं० १५२५ वै० शु० ३ गुरौ धीमूलसंधे सरस्वतीगच्छे भ० श्रीसकलकीर्ति तत्पट्टे
भ० श्रीविमलेन्द्रकीर्तिभिः श्रीशांतिनाथबिम्बं प्रतिष्ठितं बृहद्गच्छीयैः भ० करमसी
भा० करमादे सु० जइता भा० जइतलदे स(सु०) शंका।

पद्मावती ४. संवत् १६६३ वर्षे माघमासे कृष्णापक्षे प्रतिपदायां श्रीमूलसंधे सरस्वतीगच्छे
बलात्कारगणे कुन्दकुन्दाचार्यान्वये भट्टारक धर्मकीर्तिगुरुस्तत्पट्टे भट्टारक प प्र०
श्री उपदेसात् नागणपुरीणो.....सुखानन्द भार्या.....रा नित्यं प्रणमति ॥
भट्टारक ४०५० श्री श्री सुखानन्दचार्याणामुपदेसा(शा)त्।